Q→ जैन दर्शन के अनेकान्तवाद की व्याख्या करें?

Ans→ अनेकान्तवाद जैन दर्शन का सार सिद्धांत है। यह एक तत्वमीमांसा सिद्धांत है जो बहुतत्व-वादी, वस्तुवादी तथा सापेक्षवादी है। अनेकांत-वाद जैन दर्शन का मूल सिद्धांत है। इस सिद्धान्त के अनुसार जगत में अनेक वस्तुएँ विद्यमान है तथा प्रत्येक वस्तु में अनन्त धर्म है। जैनों ने कहा है - अनन्त धर्मकम् वस्तु।

जैन दार्शनिकों के अनुसार यह संसार चेतन जीवन और भौतिक जड़-तत्व से परिपूर्ण है। चेतन जीव तथा भौतिक जड़तत्व नित्य, परस्पर भिन्न तथा स्वतन्त्र है। जैन दर्शन में आत्मा शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, बल्कि आत्मा के स्थान पर 'जीव' शब्द का प्रयोग किया गया है अतः यहाँ जीव आत्मा का ही पर्यायवाची है। यहाँ जीव को एक चेतन द्रव्य की संज्ञा दी गई है। चेतना जीव का स्वरूप लक्षण है। जैन दर्शन में जीव को ज्ञाता, कर्ता तथा भोक्ता माना गया है जीव की प्रमुख विशेषता यह है कि जीव जन्म नहीं लेता बल्कि शरीर

Teacher's Signature

धारण करता है। जीव अनेक हैं। जैन जीवों के सम्बन्ध में बहुतत्ववादी मत को अपनाते हैं तथा कहते हैं कि यह समस्त संसार अनन्त जीवों से परिपूर्ण है। जीव का विकास केवल मनुष्यों, पशुओं और पेड़-पौधों में ही नहीं है, बल्कि चातुओं और पत्थरों आदि में भी जीव पाया जाता है। जैन दार्शनिकों का जीव सम्बन्धी यह मत सर्वात्मवाद का पोषक प्रतीत होता है।

जीव के अतिरिक्त दूसरा तत्व 'जड़तत्व' है। इसे जैन दर्शन में पुद्गल की संज्ञा दी गई है। जड़तत्व का ही दूसरा नाम पुद्गल है। जैन दर्शन अकेला दर्शन है जिसमें जड़तत्व के लिए पुद्गल शब्द का प्रयोग किया गया है। इसके विपरीत सांख्य दर्शन में जड़तत्व प्रकृति, न्याय दर्शन में परमाणु, शंकर के दर्शन में माया तथा रामानुज के दर्शन में अचित शब्द का प्रयोग किया गया है। जैन दर्शन में पुद्गल को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि जो पूर्ण होते रहे और गलते रहे, वही पुद्गल है। यहाँ पुद्गल के दो प्रमुख भेद हैं - अणु और स्कन्ध। पुद्गल का वह अन्तिम अंश जिसे विभाजित न किया जा सके अणु कहलाता है। अनेक अणुओं से स्कन्ध

की रचना होती है। स्कन्ध अणुओं का समुदाय है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श ये पुद्गल के चार गुण है। ये चारों गुण अणु तथा स्कन्ध में भी विद्यमान रहते है। जैन दार्शनिकों के अनुसार सत्ता द्रव्यों के रूप में है। द्रव्य वह है जिसमें उत्पत्ति, विनाश और ध्रौव्यं (नित्यता) पाया जाता है।

जैन दर्शन में द्रव्य के लिए धर्मी तथा गुण के लिए धर्म शब्द का प्रयोग किया गया है। जैन दार्शनिकों ने धर्मी की परिवर्तनशीलता तथा अपरिवर्तन-शीलता के आधार पर धर्मों को दो भागों में विभाजित करती है।